PUNE RESEARCH WORLD ISSN 2455-359X
AN INTERNATIONAL JOURNAL OF INTERDISCIPLINARY STUDIES VOL 7, ISSUE 3

मुगल साम्राज्य की भयावह हिंस्र शक्ति का दाहक दस्तावेज "आलमगीर"

डॉ प्रकाश कृष्णदेव धुमाल
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग
शां.घो.कला, विज्ञान एवं गो.प.वाणिज्य
महाविद्यालय शिवले जिला–थाना (महा.)

साहित्य का व्यापक रचना–संसार दो रूपों में भोगा जाता है–एक तो पढ़ और सुन कर और दूसरा देखकर। इसी आधार पर एक को श्रव्य और दूसरे को दृश्य कहते हैं।दृश्य काव्य नाटक साहित्य का पर्याय है जो सामूहिक कलाओं के माध्यम से रंगमंच पर प्रदर्शित होता है, जिसे दर्शक समुदाय देखकर आनन्दित और पुलकित होता है। साहित्य की सभी विधाओं और कलाओं में नाटक एक ऐसी जीवन्त कला है, जो अपने युग एवं समय को वाणी देने में अत्यधिक समर्थ है। नाटक जनता से या अपने प्रेक्षकों से सीधे साक्षात्कार करता है और नाट्यानुभूति के धरातल पर उन्हे संवेदना एवं वैचारिक धरातल पर उध्देलित कर सकने तथा सोचने पर विवश करने की सामर्थ्य रखता है। यही कारण है जिसने कथाकार भीष्म साहनी को नाट्यलेखन की ओर उन्मुख किया।

भीष्म साहनी का नाट्यविधा से आन्तरिक लगाव भी रहा है। 'हानूश' की रिहर्सल तथा मंचन के दौरान इस लगाव को अभिव्यक्त करते समय उन्होंने कहा है–"नाटक की दुनिया बड़ी आकर्षक और निराली दुनिया है। जिस तरह धीरे–धीरे एक नाटक रूप लेता है और रूप लेने पर एक नये संसार की जैसी सृष्टि हो जाती है, यह अनुभव बड़ा ही सुखद और रोमांचकारी होता है– अभिनेताओं के लिए अपने आस–पास की कारोबारी दुनिया का कोई अस्तित्व नहीं होता, उनके लिए अस्तित्व होता है नाटक की दुनिया का, जो महिने–दो महिने में अस्तित्व में आयेगी और ऑख झपकते ही फिर टूट–फूट जायेगी।

वर्षों बाद भी वह दुनिया मुझे बड़ी हृदयग्राही लगी और मन चाहा कि सब काम छोड़ कर फिर नाटक लिखू।"[1] यही आन्तरिकता और संवेदनशीलता थी, जिसके कारण 'हानूश' के बाद 'कबिरा खड़ा बज़ार में', 'माधवी', 'मुआवज़े', 'रंग दे बसन्ती चोला' और 'आलमगीर' जैसे सशक्त नाटकों की रचना भीष्म साहनी जी ने की।

रचनाक्रम की दृष्टि से 'आलमगीर' भीष्म साहनी का छठा तथा अन्तिम नाटक है, जो 'मुगल साम्राज्य के कालजयी क्रूर शहंशाह औरंगजेब, दारा, शाहजहान, मुरादाबख्श, जहानारा, और रोशनारा के माध्यम से इन चरित्रों को ही नहीं बल्कि सत्ता – व्यवस्था और स्वयं इतिहास के अंतरंग में व्याप्त विसंगीतयों एवं विद्रूपताओं को उजागर करने की कोशिश करता है। 'आलमगीर' में समकालीन मूल्य टूटन की बेचारगी को व्यक्त करने के लिए भीष्म साहनी ने इतिहास की महत्वपूर्ण घटनाओं और प्रसंगों को सम्बध्द किया है। "कथ्य की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण संवेदनशील इस नाटक में वस्तुतः चलता–फिरता आज का एक काल खण्ड़ है जिसका भीष्म साहनी ने पूरी गम्भीरता से नाट्यान्तर किया है।"[2] डॉ. लवकुमार लवलीन के मतानुसार – "आलमगीर मूलतः मुगलकाल के समय विशेष का ऐतिहासिक चित्रण मात्र ही न होकर कही गहरे आधुनिक राजनीतिक चेतना के धरातल पर मूल्यान्कन प्रस्तुत करने के साथ ही समसामयिक यथार्थ को ऐतिहासिक स्थितियों, प्रसंगों एवं पात्रों के क्रियाकलापों और व्यवहारों के माध्यम से उपस्थित करने का सशक्त प्रयास है।"[3]

नाट्य–शिल्प और संरचना की दृष्टि से आलमगीर में किसी नयी युक्ति या तकनीक का प्रयोग नहीं हुआ है। अपने पूर्व प्रकाशित नाटक 'मुआवज़े' की तरह इसकी बुनावट बहुत सीधी और सरल है। अंक विहीन केवल दस दृश्य। इसकी उर्दू–अरबी–फारसी निष्ठ काव्यात्मक नाट्य–भाषा और इसके व्यन्जनागर्भित प्रवाहमय संवाद। ये सारी बातें इस नाटक को कई दृष्टियों से मोहन राकेश और सुरेन्द्र वर्मा के बहुचर्चित अतीताश्रयी किन्तु आधुनिक रंग–नाटकों की परम्परा से जोड़ देती हैं। 'आलमगीर' में मुगलकालीन भारतीय इतिहास में हुए भयानक राजनीतिक घात–प्रतिघात, विश्वासघात, अपमान, वैचारिक उथल पुथल, अस्त–व्यस्तताओं और आपसी संघर्षों को रेखांकित किया गया है। नाटक में वस्तु की व्यापकता और घटना क्रम में फैलाव न होने से एकाग्रता और प्रभाव का दबाव बना रहता है। सम्पूर्ण नाटक मुगल इतिहास की घटनाओं पर आधारित है, जिसमें कल्पना का आश्रय कम ही लिया गया है। नाटक की संक्षिप्त कथावस्तु इस प्रकार है – शाहजहान ने अपने चारों बेटे–दारा, औरंगजेब, शुजा और मुरादाबरश को कमशः कंधार, दख्खिन, बंगाल और गुजरात की हुकूमत संभालने के लिए भेजा है। दारा का मुहासिश कामयाब नहीं हो पाया लेकिन उसने अपनी बहादुरी और साबित कदमी का सबूत बखूबी दिया है। उनकी

बहादुरी को देखकर शाहजहान यह घोषणा कर देते हैं कि "आज से तुम चालीस हज़ारी मनसबदार हुए और तुम्हारे ज़ेर पच्चीस हजार दो अस्पा, सह अस्पा सवार होंगे।... आज से तुम शाह बलंद इक़बाल कहलाओगे। आज से तुम इस तख्त पर, हमारे वली अहद की हैसियत से बैठा करोगे, और हुकूमत के काम में हमारा हाथ बॅटाओगे।"[4] इस बात से दारा और जहानारा बहुत खुश होते हैं लेकिन औरंगजेब और रोशनारा को यह बात कॉटों की तरह चुभने लगती है। दारा कवि मिजाज का व्यक्ति है। उसने 'मजमा–उल बहराइन' अर्थात 'दो सागरों का मिलन' नामक किताब लिखी है। जहानारा भी उसी स्वभाव की है। उसनें भी 'चिश्ती की सवान–ए–उम्री' किताब लिखी है। दारा को दिये गये 'शाह बलंद इकबाल' तथा 'बली अहद' ख़िताब से औरंगजेब उसके प्रति हमेशा ईर्ष्या से पीड़ित रहता है। रोशनारा भी औरंगजेब की हां में हॉ मिलाती रहती है।

ईर्ष्या, द्वेष और स्वाभिमान से पीड़ित औरंगजेब मुरादाबख्श को अपने जाल में फॅसा लेता है। बादशाह सलामत बीमारी के कारण आठ दिन तक झरोखा दर्शन नहीं दे पाते, इसी बात का कायदा उठाते हुए वह मुरादाबख्श को यह कह कर अपने पक्ष में कर लेता है कि बादशाह सलामत को जहर दे दिया गया है। वह मुरादाबख्श को यह जता देता है कि उसे सल्तनत की कोई हवस नहीं हैं। वह टोपियॉ सी–सी कर भी अपनी गुजर कर सकता है। लेकिन मुराद बहुत ही भोला हैं, वह हर किसी पर सहज यकिन कर लेता है। वह मुरादाबख्श से कहता है कि बादशाह सलामत के द्वारा भेजा गया यह खत जाली है। इस पर शाही मोहर तो लगी है, परन्तु इसे दारा ने भेजा है, ताकि हम उससे दूर रहे और वह हुकूमत पर अपना कब्जा बनाये रखे। वह मुरादाबख्श को यह भी बता देता है कि उसकी तख्त प्राप्त करने की जरा भी इच्छा नहीं है। लेकिन वह इस सल्तनत को गारन में गिरते नहीं देख सकता। उसके लिए अगर कोई चीज बेशकीमत है तो वह है मुग़लिया सल्तनत की बहबूदी। बादशाह सलामत अगर जिन्दा भी है तो उन्हें दारा के चंगूल से छुड़ाने के लिए और उनकी जान की हिफ़ाजत के लिए हमें कोई न कोई उपाय करना होगा। औरंगजेब मुराद से कहता है – "सच पूछो तो मेरी दिली ख़्वाहिश है कि एक दिन तुम तख्त पर बैठो। ऐसी ख़्वाहिश मेरी न दारा के बारे में है, न शुजा के बारे में। दारा हुकूमत करने के काबिल नहीं है। वह सारा वक़्त फ़लसफ़े बघारता रहता है और दीन के दुश्मनों के साथ उसका उठना–बैठना है। शुजा ऐयाश है। तुम पुख़्ता इरादों के हों, बहादुर हो–जब तुम तख्त पर बैठ जाओगे तो मैं मक्का शरीफ़ की ज़ियारत पर निकल जाऊॅगा, यही मेरी दिली तमन्ना है।"[5]

दारा को जब यह खबर मिलती है कि औरंगजेब मुरादबख्श के साथ आक्रमण करने आगरा आ रहा है तो वह भी युध्द के लिए तैयार हो जाता है। शाहजहान को जब इस

बात का पता चलता है तो दारा उन्हें आश्वश्त करता है कि वह खानाजंगी को बढ़ने नहीं देगा। यह देखकर शुजा भी खुदमुख्तारी का ऐलान कर अपने नाम का शिक्का चला देता है। शाहजहान खुद युध्द में उतरने का निश्चय कर लेते है। लेकिन दारा उन्हें रोक लेता है। वह खुद ही उटकर मुकाबला करने का निर्णय ले लेता है। युध्द में खलीलुल्लाह के कहने पर दारा अपने हाथी से उतर कर कमजोर पड़ते जा रहे बाएँ महाज़ को सँभालने जाता है। दारा को हौदे में न देखकर उनके पूरे फौजो घबरा जाते हैं, उनके पॉव उखड़ने लगते हैं। नतीजा यह हुआ कि वह जीती बाजी हार जाता है। जब उनके लिए आगरा से भाग जाने के अलावा और कोई दूसरा रास्ता नहीं रह जाता तब दारा पत्नी नादिरा और बेटे सिपह को लेकर भाग जाता है।

औरंगजेब अपनी कामयाबी पर बहुत खुश होता है। वह इसे खुदावंदताला की मेहर मानता है– "खुदावंदताला की मुझ पर मेहर रही है, आजम। यह उन्हीं की रज़ा थी कि हम कामयाब हों।"[6] जहानारा बादशाह सलामत की ओर से खुद औरंगजेब को 'आलमगीर' पुश्तैनी तलवार सौंप देती है। साथ ही बादशाह सलामत का यह संदेशा भी देती है– "बादशाह सलामत ने तुम्हे आलमगीर का खिताब भी अता फर्माया है। तुम्हारे लिए एक पैगाम भेजा है। उन्होंने फ़र्माया है कि तुम दिल्ली के तख़्त पर बैठोगे। बाकी तीनों भाई अपने अपने सूबों में लौट जायेंगे और अपनी सूबेदारी सँभालेंगे।"[7] परन्तु औरंगजेब अपनी बहन जहानारा और अपने पिता पर भी भरोसा नहीं करता। दारा दिल्ली की तरफ भागा है, यह सुनकर वह एक फौजी दस्ता उसके पीछे लगवा देता है। राजा जसवंत सिंह को दारा को पकड़ने की शर्त पर शरण में ले लेता है। अतीबेग के जसवंत सिंह पर कितना भरोसा करें इस सवाल का जबाब देते हुए कहता है– "राजा जसवंत सिंह महज़ एक फ़र्द नहीं है। वह हमारे साथ मिलता है तो उसकी पूरी रियासत हमारे साथ मिलती है। दारा के पीछे हमने ख़लीलुल्लाह को भेजा है। अब राजा जसवंत सिंह ख़लीलुल्लाह के साथ होगा। दोनों पर नज़र रखने के लिए हम किसी और सरदार को भेजेंगे।"[8]

औरंगजेब अपने भाई दारा को पकड़ने के लिए ख़लीलुल्लाह को भेज देता है तथा अपने पिता बादशाह आलम को भी नजर बन्द कर देते के लिए पहले महमद आसम को भेज किले पर कब्जा जमा लेता है। वह महमद आजम को फर्माता है कि–"तुम जगह–जगह अपने सिपाही, अपने पहरेदार तैनात करोगे। तुम्हारी इजाज़त के बिना कोई भी फ़र्द किले के अन्दर नहीं जा पायेगा न ही बाहर निकल सकेगा। दिन–रात संगीन पहरा रहेगा। किसी को भी बादशाह सलामत से मिलने की इजाजत नहीं होगी। किले फाटक तुम्हारे ही हुक्म पर खोले और बन्द किए जाएँगे।... बादशाह सलामत को लम्हे–भर के लिए भी महसूस नहीं हो कि उन पर कोई पाबंदी लगा दी गई है। आराम और

आसायश का हर सामान उनके लिए मुहय्या करोगे। उनकी दिलजोई के लिए खूबसूरत से खूबसूरत रक्कासा उनके पास भेजोगे।"[9] उन्हे इस बात का विश्वास दिलाओ कि यह सब उनकी हिफ़ाजत के लिए किया जा रहा है।

मुरादाबख्श एक दिन नशे में अपने देखे हुए खाब का जीक्र अलीबेग से कर रहा था, उन्हें सुनकर औरंगजेब क्रोधित हो जाता है और उसे पकड़कर गिरफ्तार कर देने का हुक्म देते हुए अलीबेग से कहता है– "सुनो आज ही रात के अन्धेरे में, मुरादबख्श को सीधा दिल्ली ले जाया जाएगा। किसी को कानोंकान खबर नहीं होने पाये कि मुरादबख्श को गिरफ्तार कर लिया गया है। दिल्ली में पहुॅचकर मुरादबख्श को सलीमगढ़ के किले में नज़रबन्द कर दोगे। बाद में इसे ग्वालियर के किले में भेज दिया जाएगा।"[10] साथ ही मुरादबख्श का सारा खजाना जब्त कर लेने की बात भी कह देता है और उसकी ऐयाशी के लिए उसकी माशुका सरसन बाई को भी उस तक पहुॅचाने की सूचना दे देता है।

दारा अपनी जान बचाते मलिक जीवन के पास चला जाता है। एक बार दारा ने उनकी जान बचायी थी। लेकिन वह दारा के साथ विश्वासघात करता है। बीमार नादिरा की मौत हो जाती है। दारा को गिरफ्तार कर उनका सारा सामान लूट लिया जाता है। बन्दी बनाकर उसे दिल्ली लाया जाता है। औरंगजेब के कहे अनुसार मलिक जीवन की पालखी के पीछे उसकी मरियल, बूढ़े हाथी पर, नंगे सिर, चिथड़े पहनाकर, हाथी की दुम की तरफ मुॅह करके बिठाकर सवारी करायी जाती है। दारा को इस स्थिति में देखकर बहुत से लोग रोने लगते हैं। उसको देखने के लिए भीड़ सैलाब की तरह उमड़ पड़ती है। भीड़ में बैचेनी हो उठती है और लोग मलिक जीवन पर पथराव करने लगे हैं। दारा की यह स्थिति जहानारा से देखी नहीं जाती, वह औरंगजेब से दारा की जिन्दगी की भीख मांगती है। वह औरंगजेब से कहती है – "तुम तो मज़हबी आदमी हो, औरंगजेब! क्या तुम्हारे अन्दर रहम के सोते सूख चुके हैं? तुम एक इन्सान के नाते, एक भाई के नाते, उसकी जानबख़्शी कर दो।"[11] लेकिन मजहबी अदालत के नाम पर औरंगजेब उसका कत्ल कर देता है।

तख्त को हथियाने की हवस में औरंगजेब एक के बाद एक अपने ही परिवारवालों पर अन्याय करता चला जाता है, लेकिन अन्त में उसकी स्थिति ऐसी हो जाती है कि वह शक–मिजाजी बन जाता है। वह किसी पर भी भरोसा नहीं करता, यहॉ तक कि वह अपने बेटों और बेटी को भी नजरबन्द कर देता है। उसकी इस स्थिति को जहानारा के सामने रखते हुए आयोबेग कहता है– "कोई फ़र्द नही जिस पर वह शक न करने लगे हों। दरबार में उमरा उनके सामने खौफ़जहद खड़े रहते हैं। कोई नहीं जानता कि कल बादशाह

सलामत का क्या रूख होगा।... किसी ओहदेदार को किसी मुहिम पर भेजते हैं तो उस पर नजर रखने के लिए किसी दूसरे मनसबदार को उसके साथ जोड़ देते हैं। फिर दोनों पर नजर रखने के लिए किसी तीसरे को .... नतीजा यह हुआ है कि बादशाह सलामत खुद अकेले पड़ते जा रहे हैं।"[12]

वयोवृध्द औरंगजेब को अन्त में उन सभी लोगों की याद आती हैं जिनके साथ उसने अन्याय किया है। वह रहमी होने लगता है। वह अन्त में जहानारा को बताता है कि उसने दारा को कैसे मारा था। दारा ने औरंगजेब को मरने से पहले खत लिखा था जिसमें उनकी तख्त की चाह नहीं थी, वह तो एक छोटा सा घर रहने के लिए चाहता था, और एक बॉदी जो उसके लिए खाने का बन्दोबस्त कर सके बेहोशी में वह अनर्ग बातें करने लगता है "वह नज़रबेग था जिसने दारा का सिर कलम किया था। नज़रबेग, जरखरीद गुलाम। वही उसका सिर धो–पोंछकर मेरे पास लाया था... और साईफखान था जिसकी निगरानी में उसका सिर कलम किया गया था।... साईफखान फ़कीखल्लाह, जिसने 'रागदर्पण' लिखा था। वही... वही। वह दारा का दोस्त था। मैंने उसे भेजा था कि अपनी निगरानी में दारा का कत्ल करवाए।"[13]

औरंगजेब को अपने पिता, भाई, बेटों की याद आती है, उस पर अकेलापन हावी हो जाता है। उसने अपने दोनों बेटों–मुअ़ज्ज़म और आज़म को क्रमशः काबुल तथा गुजरात भेज दिया है, परन्तु मराठों के साथ उनका बढता हुआ मेलजोल वह सह नहीं पाता। वह स्वयं दक्षिण की मुहिम पर जाने के लिए तैयार हो जाता है और इसी मुहिम में उसका अंत हो जाता है। उसकी अंतिम इच्छ़ा के मुताबिक उसकी कब्र खुले आसमान के नीचे ऐसी बनाई जाती है, जिस पर कोई छत था कोई साया न हो।

'आलमगीर' मुगलकालीन भारतीय इतिहास की भयानक राजनीतिक अस्थिरता, उठा–पटक और षड्यंत्र, हिंसा, कूटनीति, हत्या तथा विश्वासघात, आदर्शहिनता, चरित्र हिनता, स्वार्थ की व्यापक तथा भयावह स्थितियों से साक्षात्कार कराता है। स्वार्थ सिध्दि, अपने उद्देश्य की पूर्ति और सत्ता हथियाने की दुर्भावना से ग्रस्त अपने ही सगे–संबन्धियों को नजरबन्द करवाना या निर्ममतापूर्वक उनकी हत्या तक करवा देना पूरे मुगल साम्राज्य की भयावह सच्चाई है। शाहजहॉ, दारा शिकोह और औरंगजेब के परम नाटकीय जीवन, जटील मानवीय स्वभाव के अन्तर्विरोध को पकडते हुए नाटककार भीष्म साहनी ने उनकी जीवन त्रासदी, कूटनीतिक चाल, दॉव–पेंच एवं सत्ता हथियाने के लिए बाप–भाई तक की हत्या करनेवाले क्रूर शासक का चरित्रिक उद्घाटन भी किया है। वास्तव में 'आलमगीर' मानव की अपनी दुर्बलताओं, स्वभाव की विवशताओं और आकांक्षाओ की उत्कटता से

उत्पन्न विषम परिस्थिति का नाटक है। गुटबाजी, स्वार्थपर आधारित राजनीतिक सम्बन्धों, दुरभिसन्धियों और कूटनीतिक समीकरणों के माध्यम से आधुनिक सन्दर्भ में राजनीतिक विडम्बना, उथल–पुथल, कुर्सी पाने की होड़, पद–लिप्सा, अहंकार तुष्टि के लिए धन की बर्बादी, तथा अन्तर्विरोधी चरित्रों की उभारा गया है। औरंगजेब में विवेक, बुध्दि, चतुराई, सतर्कता, हिम्मत और ताकत भी है, पर जिस सत्ता पर काबिज होने के लिए, आलमगीर बनने के लिए वह इन सबका प्रयोग करता है, उसे पाकर भी वह कभी शान्त और सुरक्षित नहीं रह पाता है। दारा के साथ मलिक जीवन का विश्वासघात, नादिरा की असमय मृत्यु, किले में नजरबन्द शाहजहान और उनकी बेचैनी, दिल्ली की सड़कों पर मरियल, बूढे, बदन पर कीचड़–मिट्टी मैले से लिप्त हाथी की पीठ पर दुम की तरफ मुँह किये दारा को घुमाये जाने का दृश्य बहुत ही कारूणिक वातावरण सृजित कर राजनीति के ओछेपन की हद को दिखाता है। अपने भाइयों को मरवाने और अपने बाप को कैदखाने में ड़लवाने वाले औरंगजेब के चरित्र से स्वार्थ सिध्दि के लिये व्यक्ति की नीचता और हद दर्जे की विचारहीनता ही प्रदर्शित हुयी है। सिर पर जगमग करता ताज, गले में मोतियों का हार और कमर में आलमगीर तलवार औरंगजेब के सत्ताधीश होने का सूचक है तो दूसरी ओर मुगल साम्राज्य के अधःपतन का मूल कारणों का द्योतक भी। आलमगीर तलवार, दारा की लिखी पुस्तक और औरंगजेब दारा शाहजहान को लिखा गया पत्र गहरी अर्थवत्ता लिये हुये है और चरित्रों की भावात्मक प्रस्तुति को अभिव्यक्त करने वाले भी। दारा की लिखी पुस्तक की कूटनीतिक चालों की तहत उसकी मृत्यु का और शाहजहान द्वारा औरंगजेब को भिजवायी गयी आलमगीर तलवार ही उनके नजरबन्द होने का कारण बनती है।

नाटक के सृजन में सबसे महत्वपूर्ण तत्व होता है नाट्यानुभूति, जिसकी अभिव्यक्ति के लिए ही नाटककार नाटक का सृजन करता है और उसी के आधारपर वस्तु और शिल्प का निर्माण करता है। यह महज संयोग नहीं है कि भारतीय इतिहास के कालजयी नायक राजा ययाति, सम्राट अशोक, राजा शिवाजी, छत्रसाल आदि को लेकर कई ऐतिहासिक नाटक लिखे गये है, परन्तु औरंगजेब की मानसिकता को खोलकर रखनेवाला यह शायद पहला ही नाटक है। आरम्भ से ही इतिहास उसके दृष्टिकोण की उपेक्षा करता रहा है तथा उसे एक खलनायक के रूप में प्रस्तुत करता रहा है। भीष्म साहनी ने उसके अंतरंग को अभिव्यक्ति देने का पहली बार प्रयास किया है जिसमें 'उन्हे' पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है।

'आलमगीर' में भीष्म साहनी सूक्ष्म स्तर पर जिन परिस्थितियों को पकड़ कर लक्ष्य भेदी होते हैं वह आज बहुत अधिक महत्वपूर्ण है। मानवीय मूल्यों के इस संघर्ष में इतिहास और ऐतिहासिक पात्रों का महत्व नहीं है महत्व है उन वैचारिक दबावों, माननीय मूल्यों, आधुनिक सन्दर्भों, मूल्य चिंताओं, सार्थक द्वन्द्व संघर्षो, सकारात्मक रचनात्मक बुनियादी

सरोकारों का जिनकी पूर्ति सत्ता का कर्तव्य है और मनुष्य मात्र का अधिकार। सत्ता व्यवस्था के दबावों और निरंकुशता के कारण निम्नतम तस्त पर जीवन की बेचारगी यदि सिर उठाती है तो मानवीय गरिमा, स्वातंत्र्य की रक्षा होनी जरूरी है। यही नाटक का उद्देश्य है।

भीष्म ने 'आलमगीर' में औरंगजेब के माध्यम से एक मुस्लिम शासक के क्रूर, हिंसक अमानवीय व्यक्तित्व के भीतर का द्वन्द्व और मनोविज्ञान को समझाने का पहली बार प्रयास किया है। औरंगजेब जैसे स्वेच्छाचारी शासकों की महत्वाकांक्षा और उसमें निहित त्रासदी का, उसके संशयों और संवेदना का इतनी रागात्मकता और सघनता के साथ चित्रण इस नाटक को विशिष्ट बनाता है। अमानवीय तत्वों में मानवीय द्वन्द्व का अन्वेषण, रचनाकार की संवेदनशीलता, सर्जनात्मक चेतना का प्रमाण है। चरित्र की सधन संवेदनात्मकता, भावात्मक, रागात्मक चित्रण, भाषा की लयात्मकता और रंगमंचीयता के कारण ही 'आलमगीर' हिन्दी के ऐतिहासिक नाटकों में अपना अलग स्थान रखता है।

'आलमगीर' सत्ता की राजनीति कुर्सी हाथियाने की साजिश और महत्वाकांक्षाकी पूर्ति के लिए अपने बाप तक को जंजीरों में जकड़ कर काल कोठरी में डालनेवाले और भाइयों की सरेआम अपमानित कर छलपूर्वक मौत के घाट उतार देने की घटना की रोचक प्रस्तुति करनेवाला ऐतिहासिक नाटक होकर भी प्रकारान्तर से समकालीन राजनीतिक दॉव पेंच और विश्वासघात के साथ ही कूटनीतियों का वास्तविक उद्घाटन करता है। "यह नाटक सिध्द करता है कि सत्ता लिप्सा वाले व्यक्ति अपनी स्वार्थ सिध्दि के लिए रक्त सम्बन्धियों का भी रक्त बहा सकते हैं। शहांजहॉ और औरंगजेब के सम्बन्ध जिस हद तक औपचारिक हो जाते हैं और दारा शिकोह को जिन विपतियों तथा दुःखों का सीधा सामना करना पड़ता है, वह मुगलकालीन इतिहास का एक अध्याय ही नही है, अपितु मुगल शासकों के वास्तविक चरित्रों का लेखा–जोखा भी है।"[14]

'आलमगीर' वस्तुतः बहुत विस्तृत कैनवास का नाटक नहीं है और न तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक और वैचारिक विघटन अथवा मूल्यों के संक्रमण को ही यथार्थ रूप में प्रस्तुत करने के उद्देश्य से लिखा गया है जो मुगलकालीन इतिहास तलाशने की कोशिश में होते है। नाटक में छोटे–छोटे दृश्यों में 'व्यक्ति की यंत्रणा, व्यवस्था और सत्ता की उथल–पुथल, छल–कपट, षड्यंत्र, विकृत मनस्थितियॉ, हिंसा, प्रतिहिंसा, निर्ममता, स्वार्थपरता, घृणा आदि से उद्भूत विरूपता को इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है कि समकालीन राजनीति और उससे सम्बध्द विडम्बनात्मक सन्दर्भ उजागर हो जाते हैं। नाटक में दिल्ली के तख्त पर औरंगजेब के पदासीन होने का संघर्ष चित्रित है और किले की ऊॅची दीवारों के पीछे चल रही घटिया साजिशों का पर्दाफाश भी। यह नाटक दो स्तरों पर

चलता है– एक सत्ता प्राप्ति का संघर्ष और दूसरा मानवीय। सत्ता–प्राप्ति के लिये औरंगजेब अपनी निरंकुशता के सारे अवरोधों को समाप्त करता है और शेष अवरोधों को यथाशक्ति मिटाने की हृदय में कामना रखता है जिसके लिये उसे अतिरिक्त क्रूरता और अमानवीय हरकतों का सहारा लेना पड़ता है। मानवीय स्तर पर भी वह धीरे–धीरे क्रूर होता है किन्तु कही–कही अपने भीतर की मानवीयता और अन्तरात्मा को टटोलता हुआ अपने आपको सान्त्वना देने के उद्देश्य से अपने कुकृत्यों को सही साबित करने की कोशिश में और ज्यादा क्रूर स्वभाव का परिचय देता है। नाटक के प्रारम्भ में उनका प्रवेश जितना प्रभावशाली है, अन्त में पश्चाताप की स्थिति में भी अपने प्रति दर्शकों के विचार नहीं बदल पाता है और न सहानुभूति ही अर्जित कर पाता है। "उसका आन्तरिक संघर्ष और चारित्रिक पक्ष उसके स्वभाव से अलग नही लगता है। नाटककार की नाट्यानुभूति मूलतः परिस्थितियों के घात–संघात और चरित्रों के माध्यम से सम्प्रेषित हो जाती है।"[15]

सन्दर्भ संकेत :–

1) कमलेश्वर(सं.) सारिका, नवम्बर 1978, पृ. 14.
2) गौतम(डॉ.) वीणा, हिन्दी नाटक आज तक, सं. 2001,शब्द सेतु प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 381.
3) लवलीन लवकुमार, प्रगतिशील नाटककार भीष्म साहनी, प्र. सं. 2011, विकास प्रकाशन, कानपुर पृ. 54.
4) साहनी भीष्म, आलमगीर, सं. 2003, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 16–17.
5) वही, पृ. 22.
6) वही, पृ. 35.
7) वही, पृ. 37.
8) वही, पृ. 41.
9) वही, पृ. 42.
10) वही, पृ. 45.
11) वही, पृ. 61.
12) वही, पृ. 69.
13) वही, पृ. 74–75.
14) लवलीन लवकुमार, प्रगतिशील नाटककार भीष्म साहनी, प्र. सं. 2011, विकास प्रकाशन, कानपुर पृ. 39–40.
15) वही, पृ. 50.